जनसत्ता

बेनकाब पाक

पाकिस्तान ने कश्मीर मुद्दे को लेकर फिर से नया विवाद खड़ा करने की जो कोशिश की है, उससे साफ है कि उसका मकसद समस्या का समाधान करना नहीं, बल्कि उसे उलझाए रखना और नए-नए विवाद खड़े करना है। ताजा विवाद यह है कि कश्मीर के मुद्दे पर पाकिस्तान के विदेश मंत्री शाह महमूद कुरैशी ने भारत सरकार को दरकिनार करते हुए कश्मीरी अलगाववादी नेता मीरवाइज उमर फारूक और हुर्रियत कॉन्फ्रेंस के कट्टरपंथी नेता सैयद अली शाह गिलानी से बात की। यह बातचीत कश्मीर मुद्दे को अंतरराष्ट्रीय मंच पर उठाने की योजना के बारे में की गई और फिर लंदन में कुरैशी ने कश्मीर पर आयोजित दो कार्यक्रमों में इसे उठाया भी। पाकिस्तानी विदेश मंत्री के इस कदम पर भारत का नाराज होना स्वाभाविक है। भारत ने तत्काल इस पर नाराजगी व्यक्त की और नई दिल्ली में इस्लामाबाद के प्रतिनिधि को बुला कर आपत्ति दर्ज कराई। सवाल है कि आखिर पाकिस्तान के विदेश मंत्री को कश्मीर जैसे गंभीर मुद्दे पर अलगाववादी नेताओं से बात क्यों करनी चाहिए? ये अलगाववादी नेता तो वे हैं जो भारत सरकार को तवज्जो नहीं देते और वार्ताओं के प्रस्ताव को ठुकराते आए हैं। यह भी किसी से छिपा नहीं है कि कश्मीर के अलगाववादी नेता पाकिस्तान की शह पर काम करते हैं।

कश्मीर मुद्दे को लेकर जब-जब भारत ने सकारात्मक रुख दिखाया है और वार्ता के लिए पहल की है, तभी पाकिस्तान कोई न कोई ऐसी चाल चल देता है जिससे सारी कवायद पर पानी फिर जाता है। पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने अपनी ओर से सदाशयता दिखाते हुए लाहौर यात्रा की पहल की थी और उसका बदला पाकिस्तान ने करगिल युद्ध के रूप में दिया। इसके बाद भारत की संसद और मुंबई के हमले जैसी घटनाओं को अंजाम दिया। हाल में अलगाववादी नेताओं से बात कर पाकिस्तान ने रिश्तों को बिगाड़ने की दिशा में ही कदम बढ़ाया है। पाकिस्तान को अगर कश्मीर के मामले में कोई भी बात करनी है तो भारत की सरकार से करनी चाहिए थी। ऐसी वार्ताओं के लिए एक निर्धारित राजनयिक प्रक्रिया होती है। अगर भारत की निर्वाचित सरकार को दरकिनार करके पाकिस्तान अलगाववादी नेताओं से बात करता है तो साफ है कि वह उन्हीं गुटों को बढ़ावा दे रहा है जो भारत के खिलाफ काम कर रहे हैं और कश्मीर घाटी में हिंसा व अलगाववाद फैलाने के लिए जिम्मेदार हैं। यह इस हकीकत को भी पुष्ट करता है कि कश्मीर के अलगाववादी नेता पाकिस्तान के इशारे पर चलते हैं और घाटी में अशांति पैदा करने में इनकी बड़ी भूमिका है।

कश्मीरी अलगाववादियों से बातचीत के बाद कुरैशी ने कहा भी था कि वे हाउस ऑफ कॉमंस में कश्मीर का मुद्दा उठाएंगे। लेकिन ब्रिटेन ने इससे साफ इनकार कर दिया और कुरैशी को मुंह की खानी पड़ गई। कश्मीर को लेकर भारत हमेशा से एक ही बात कहता आया है कि कश्मीर भारत का अभिन्न हिस्सा है और रहेगा और इस बारे में किसी तीसरे पक्ष की मध्यस्थता का प्रश्न ही नहीं उठता। ऐसे में फिर ब्रिटेन में कश्मीर का राग अलाप कर कुरैशी सिर्फ सहानुभूति बटोरने से ज्यादा कुछ नहीं कर रहे। दरअसल, आतंकवाद के मुद्दे पर पाकिस्तान बेनकाब हो चुका है। भारत शुरू से कहता आया है कि वह तब तक कोई बात नहीं करेगा जब तक पाकिस्तान सीमापार आतंकवाद और कश्मीर में उग्रवादियों को समर्थन देना बंद नहीं करता। कुरैशी अगर भारत सरकार को नजरअंदाज कर अलगाववादियों से सीधे बात करते हैं तो जाहिर है कश्मीर को लेकर पाकिस्तान का रुख क्या होगा!

कालेधन पर परदा

कालेधन को लेकर लंबे समय से विवाद चल रहा है। यूपीए सरकार के समय जब भारतीय नागरिकों का विदेशी बैंकों में भारी मात्रा में कालाधन जमा होने का खुलासा हुआ, तो उन खाताधारकों के नाम उजागर करने और वह धन वापस लाने की मांग जोर-शोर से उठी थी। तब इस दिशा में कुछ पहल भी हुई थी। विदेशी बैंकों में जमा भारतीय कालेधन की राशि का भी अनुमान लगाया गया था। पर कुछ विदेशी बैंकों की गोपनीयता शर्तों के चलते और कुछ सरकारी अड़चनों की वजह से उस पैसे को वापस लाने की उम्मीद बलवती नहीं हो सकी। हालांकि सरकार के पास कालेधन से संबंधित तीन रिपोर्टें हैं, जिनमें कुछ खाताधारकों के बारे में जानकारी उपलब्ध है। इसके अलावा निजी तौर पर खुफियागीरी करने वाले कुछ लोगों ने भी विभिन्न बैंकों में जमा भारतीय कालेधन के बारे में जानकारियां उपलब्ध करा रखी हैं। उनमें कितनी सच्चाई है, यह जांच का विषय है। पर सरकार के पास जो अपने आधिकारिक सूत्रों से जानकारियां उपलब्ध हैं, उन्हीं का विश्लेषण नहीं हो पाया है। इसलिए सूचना के अधिकार कानून के तहत जब कालेधन के बारे में जानकारी मांगी गई तो केंद्रीय वित्त मंत्रालय ने यह कहते हुए जानकारी उपलब्ध कराने से मना कर दिया कि इससे संसद के विशेषाधिकार का हनन होगा।

वित्त मंत्रालय ने माना है कि अलग-अलग समय पर जो रिपोर्टें उसे प्राप्त हुईं, उन्हें वित्त पर संसद की स्थायी समिति को भेज दिया गया है, जिसकी वह जांच करेगी। यह सही है कि संसदीय समिति के पास जिस मामले की जांच लंबित है, उसके बारे में जानकारी सार्वजनिक करना उचित नहीं होगा। पर हैरानी की बात है कि सरकार को जो आखिरी रिपोर्ट सौंपी गई उसे चार साल से ऊपर होने को आया। पहली रिपोर्ट करीब आठ साल पहले सौंपी गई थी और दूसरी पांच साल पहले। इतने समय तक इन रिपोर्टों की जांच क्यों नहीं हो पाई। पिछले लोकसभा चुनाव के दौरान कालेधन को प्रमुख मुद्दा बनाया गया था, विदेशों से कालाधन वापस लाने का भरोसा दिलाया गया था। अब तक उस दिशा में कोई सार्थक पहल नहीं हो पाई, तो सवाल उठने स्वाभाविक हैं।

विदेशी बैंकों में भारतीय पैसा जमा कराने का तथ्य जगजाहिर है। यह पैसा किस तरह उन बैंकों में पहुंचता है, यह बात छिपी नहीं है। यह भी सब जानते हैं कि अगर विदेशी बैंकों में पैसा जमा कराने की प्रवृत्ति पर रोक लगाने में कामयाबी मिल जाए, तो भ्रष्टाचार के बहुत सारे मामले अपने आप रुक जाएंगे। फिर भी भ्रष्टाचार पर रोक लगाने का नारा देने के बावजूद इस दिशा में कोई कारगर कदम नहीं उठाया जा सका है। भ्रष्टाचार के जरिए जुटाया धन विदेशी बैंकों में भेजने वालों के बारे में भी स्पष्ट है। इनमें ज्यादातर लोग बड़े कारोबारी या फिर राजनेता और प्रशासनिक अधिकारी हैं। विदेशी बैंक इस तरह के खाताधारकों की पहचान पूरी तरह गोपनीय रखते हैं और अगर उनकी पहचान पता चल भी जाए, तो वह पैसा निकालना सरकारों के लिए खासी मशक्कत का काम है। इसलिए जिन कुछ मामलों में भारत सरकार ने पैसा वापस लाने का प्रयास किया, संबंधित बैंकों और वहां की सरकारों के साथ करार करने की कोशिश की, तो वह विफल ही साबित हुई। इससे एक बार फिर यही साबित हुआ है कि राजनीतिक पार्टियां कालेधन को वापस लाने का चाहे जितना बढ़-चढ़ कर दावा करें, यह मामला फिलहाल परदे में ही बना रहने वाला है।

कल्पमेधा

यह अभिमान था, जिसने देवताओं को दैत्यों में बदल दिया। यह दीनता है, जो मनुष्यों को देवता बना देती है।
-ऑगस्ताइन

जवानों में अवसाद और योग

अभिजीत मोहन

गृह मंत्रालय की एक रिपोर्ट में जवानों की आत्महत्या और अवसाद के कई कारण गिनाए गए हैं जिनकी वजह से पिछले कुछ वर्षों में विभिन्न अर्धसैनिक बलों के चार सौ से अधिक जवानों ने आत्महत्या की और साथ ही अपने साढ़े तीन दर्जन से अधिक साथियों को निशाना बनाया। आत्महत्या और साथियों को निशाना बनाने के अलावा बड़ी संख्या में जवान नौकरी भी छोड़ रहे हैं।

सेना और सशस्त्र बलों में बढ़ती आत्महत्या की प्रवृत्ति से चिंतित केंद्र सरकार द्वारा तीनों सेनाओं में योग और ध्यान के जरिए जवानों को अवसाद से बचाने की पहल एक स्वागतयोग्य कदम है। सेना के जवानों का मानसिक व शारीरिक रूप से स्वस्थ होना इसलिए भी आवश्यक है कि उन्हें अनुकूल व प्रतिकूल सभी परिस्थितियों में समान रूप से काम करना पड़ता है। लेकिन त्रासदी है कि विगत कुछ वर्षों में सेना और सशस्त्र बलों के जवानों में अवसाद के कारण आत्महत्या की प्रवृत्ति बढ़ी है, साथ ही वे अपने सहकर्मियों को निशाना बनाने से भी नहीं चूक रहे हैं। यह स्थिति बेहद खतरनाक है। ऐसे में आवश्यक हो जाता है कि सरकार उन्हें शारीरिक और मानसिक रूप से स्वस्थ व मजबूत बनाए, ताकि वे स्वस्थ तन-मन से अपने कर्तव्यों का भलीभांति निर्वहन कर सकें। अच्छी बात है कि इसे ध्यान में रख कर ही सरकार द्वारा उनमें व्याप्त तनाव को दूर करने के लिए 'सहयोग और मिलाप' जैसे प्रोजेक्ट शुरू किए हैं जिसके सार्थक परिणाम देखने को मिल रहे हैं। इस पहल से जवानों में आत्महत्या करने और सहकर्मियों को निशाना बनाने की प्रवृत्ति में कमी आ रही है।

सरकार के आंकड़े बताते हैं कि 2016 में सेना में आत्महत्या के संदिग्ध मामलों की संख्या एक सौ चार थी, जो 2017 में घट कर पचहत्तर और 2018 में अस्सी रही। इसी अवधि में सेना में सहकर्मियों की हत्या के मामलों में भी उल्लेखनीय कमी आई। इस अवधि में यह संख्या क्रमशः दो, एक और एक थी। इसी तरह 2016 में नौसेना में आत्महत्या के संदिग्ध मामलों की संख्या छह थी, जो 2017 में पांच और 2018 में आठ दर्ज की गई। अच्छी बात यह रही कि इस अवधि में नौसेना में सहकर्मियों की हत्या का कोई मामला सामने नहीं आया। वायुसेना की बात करें तो 2016 में आत्महत्या के संदिग्ध मामलों की संख्या उन्नीस थी, जो 2017 में इक्कीस और 2018 में सोलह दर्ज की गई। वर्ष 2016 में वायुसेना में सहकर्मियों की हत्या का केवल एक मामला सामने आया। लेकिन अच्छी बात यह रही कि 2017 और 2018 में ऐसा एक भी मामला देखने को नहीं मिला। अब जब सरकार जवानों में आत्महत्या को रोकने और वे अपने सहकर्मियों को निशाना न बनाएं, इसके लिए उन्हें मनोवैज्ञानिक सलाहकारों की मदद दे रही है तो निस्संदेह उनके स्वभाव में बदलाव आएगा। अच्छी बात यह भी है कि जवानों को पहले के बजाय अब बेहतर गुणवत्ता के कपड़े, गुणवत्तापरक भोजन, विवाहितों के लिए आवास और यात्रा जैसी कई सुविधाएं दी जा रही हैं जिससे उनमें किसी तरह का अवसाद नहीं पनप रहा है। एक वक्त था जब जवान उचित खानपान न मिलने की शिकायत कर सोशल मीडिया के जरिए अपनी वेदना प्रकट करते थे, वहीं कुछ जवान छुट्टियां न मिलने की वजह से अवसाद में आकर अपने ही साथियों को निशाना बना रहे थे। जवानों की इस प्रवृत्ति से देश और समाज में गलत संदेश जा रहा था।

पिछले साल सीमा सुरक्षा बल के एक जवान ने खराब खाने को लेकर अपना वीडियो जारी किया था। इसी तरह सीआरपीएफ का एक जवान एक वीडियो में अर्धसैनिक बल के जवानों को सेना के बराबर वेतन और अन्य सुविधाएं देने की मांग कर रहा था। सोशल मीडिया पर यह वीडियो खूब चर्चा में रहा। औरंगाबाद में सीआइएसएफ के एक जवान ने अपने ही चार साथियों को गोलियों से उड़ा दिया था। कुछ साल पहले झारखंड राज्य के सरायकेला में एक जवान ने अपने असिस्टेंट कमांडेट सहित छह लोगों को गोलियों से उड़ा दिया। जांच में पता चला कि हत्यारोपी जवान अवसाद से पीड़ित था। इस तरह की कई घटनाएं देश को विचलित कर चुकी हैं। इन घटनाओं से स्पष्ट है कि बहुतेरे जवान बुरी तरह अवसादग्रस्त हैं और दबाव में आकर आत्महत्या एवं साथी जवानों की हत्या करने जैसा कदम उठा रहे हैं। अच्छी बात है कि देर से ही सही सरकार ने जवानों के दर्द को समझा और कुछ इस तरह का वातावरण निर्मित कर रही है जिससे कि जवान आत्महत्या जैसे कदम न उठाएं और न ही अवसादग्रस्त होकर अन्य साथियों को निशाना बनाएं।

आमतौर पर आत्महत्या की प्रवृत्ति उन जवानों में सर्वाधिक देखी जाती है जो सीमा पर पहरा देते हैं या जोखिम भरे क्षेत्रों में काम करते हैं। अक्सर इन कार्यों में जवानों को अपनी जान भी गंवानी पड़ती है।

आंकड़ों पर गौर करें तो भारत-पाक सीमा पर गोलीबारी और आतंकी गतिविधियों के कारण पिछले तीन साल में सुरक्षा बलों के तकरीबन चार सौ जवानों ने जान गंवाई है। इनमें सीमा सुरक्षा बल के सबसे अधिक जवान शहीद हुए हैं। इस बल ने 2015 से 2017 के दरम्यान एक सौ सड़सठ जवानों को खोया है। अपने साथ के जवानों की शहादत को देख कर अन्य जवानों का विचलित होना स्वाभाविक है। मनोवैज्ञानिकों की मानें तो इनमें से कुछ जवान अवसाद में चले जाते हैं। गृह मंत्रालय की एक रिपोर्ट में जवानों की आत्महत्या और अवसाद के कई कारण गिनाए गए हैं जिनकी वजह से पिछले कुछ वर्षों में विभिन्न अर्धसैनिक बलों के चार सौ से अधिक जवानों ने आत्महत्या की और साथ ही अपने साढ़े तीन दर्जन से अधिक साथियों को निशाना बनाया। आत्महत्या और साथियों को निशाना बनाने के अलावा बड़ी संख्या में जवान नौकरी भी छोड़ रहे हैं। केंद्र सरकार भी लोकसभा में स्वीकार कर चुकी है कि अब तक नौ हजार से अधिक अर्धसैनिक बलों के जवान नौकरी छोड़ चुके हैं। इसका मतलब साफ है कि जवान अपनी नौकरी की सेवा शर्तों को लेकर संतुष्ट नहीं हैं।

आमतौर पर अर्धसैनिक बलों के आला अफसर यह दलील देते हैं कि जवानों में आत्महत्या की बढ़ती प्रवृत्ति का मूल कारण उनका पारिवारिक तनाव है, न कि नौकरी के दौरान उपजने वाला मानसिक दबाव। इसमें दो राय नहीं कि जवानों के खुदकुशी करने और नौकरी छोड़ने के पीछे पारिवारिक तनाव भी एक अहम कारण है। लेकिन इसके और भी कारण हैं जिन पर गंभीरता से विचार करने की जरूरत है। सच तो यह है कि नौकरी की कठिन सेवा शर्तें भी जवानों की परेशानी और आत्महत्या की एक प्रमुख वजह हैं। यहां ध्यान देना होगा कि पिछले कुछ वर्षों से सेना द्वारा नौकरी की सेवा-शर्तें एवं वेतन विसंगतियों को लेकर सवाल उठाया जाता रहा है। अच्छी बात यह है कि केंद्र सरकार ने इसे संज्ञान में लेते हुए सेना में 'वन रैंक वन पेंशन' की नीति को लागू किया और वेतन एवं पेंशन में व्याप्त विसंगतियों को दूर करने का कदम उठाया। लेकिन इससे भी ज्यादा जरूरी है सेवा शर्तों को उदार बनाना। कठिन सेवा शर्तें कई तरह की परेशानियां खड़ी कर रही हैं। हम केवल केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल की ही बात करें तो अस्सी फीसद जवानों को पिछले दो दशक से एक जगह पर स्थायी रूप से नियुक्ति नहीं मिल पाई है और वे समय-समय पर मिलने वाली प्रोन्नति से भी वंचित हैं। सच कहें तो उनका जीवन खानाबदोशों की तरह हो गया है।

सरकार को समझना होगा कि सेना और बलों के जवान भी समाज के हिस्सा हैं, उन्हें भी मानवीय संवेदनाएं प्रभावित करती हैं। उनके मन में भी परिवार के साथ रहने की ललक होती है। ऐसे में सरकार और सेना के उच्च अधिकारियों की जिम्मेदारी बनती है कि वे जवानों की भावनाओं का ख्याल रखें और उन्हें उचित पोषण के अलावा जरूरत पड़ने पर छुट्टियां दें ताकि वे सामाजिक और धार्मिक समारोहों में शामिल हो सकें। वैसे भी जवान नाना प्रकार की चुनौतियों का सामना करते हैं। अगर उन्हें समय-समय पर छुट्टियां मिलें तो वे अवसाद में जाने से बचेंगे।

तनाव की परीक्षा

श्रीप्रकाश शर्मा

दुनिया मेरे आगे

जब भी परीक्षा के तनाव के बारे में चर्चा होती है तो एक साथ कई विचार तेज आंधी की तरह जेहन में गुजरते चले जाते हैं। एक विचित्र-सा डर, भ्रम, परेशानी, अफरातफरी, दुविधा, उदासी, चिड़चिड़ापन और न जाने कितनी मानसिक और भावनात्मक अवस्थाओं को अपने में समेटे हुए परीक्षा का तनाव विद्यार्थियों के जीवन के लिए किसी दुस्वप्न से कम डरावना नहीं होता है। दुनिया भर के मनोविश्लेषक और शिक्षाविद परीक्षा के तनाव के समाधान के लिए कई प्रकार के सुझाव और तौर-तरीकों की अनुशंसा करते आ रहे हैं। कोई अपने अनुभव के आधार पर परीक्षा के तनाव के शमन के उपाय बताता है तो कोई अपने किताबी ज्ञान के आधार पर तरकीब। लेकिन प्रश्न है कि आखिर एक विद्यार्थी परीक्षा के तनाव का शिकार होता ही क्यों है! संजीदगी से विचार के लिए यह विषय भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है कि आखिर वे कौन-सी परिस्थितियां हैं जो किसी विद्यार्थी के मानसिक रूप से उद्वेलन के लिए जिम्मेदार होती हैं?

1990 के आर्थिक सुधारों के बाद संक्रमण काल में जबकि पूरी दुनिया उदारवाद और भूमंडलीकरण के परिवर्तन के दौर से गुजर रही है तो इस सच को झुठलाना आसान नहीं होगा कि इसके कारण मानव जीवन में सोचने के ढंग और जीवन-शैली में भी बेशुमार अप्रत्याशित तब्दीलियां आई हैं। इसके अलावा, जीवन में सूचना तकनीक की क्रांति के दखल ने तो आग में घी सरीखा काम किया है। सोशल नेटवर्किंग वेबसाइटों के विभिन्न उपादानों के रूप में फेसबुक, वाट्सएप, इंस्टाग्राम, ट्विटर और कई अनेक चमत्कारी और मन-लुभावन खोजों से जीवन के संस्कार, मानवीय मूल्य और नैतिक मर्यादाएं भी अछूते नहीं रह पाए हैं। इन चाहे-अनचाहे परिवर्तनों के कारण कुल मिला कर हर व्यक्ति के जीवन में रंगीनियां आई हैं और आखिर हम अपने गंतव्य की राह से भटक गए हैं।

इतना ही नहीं, उत्प्रेरक के रूप में कार्य कर रही सोशल नेटवर्किंग वेबसाइटों की जादुई दुनिया से एक किशोर विद्यार्थी-जीवन भी महफूज नहीं रह पाया है और नतीजतन उसके मन में अजीबोगरीब भटकाव आया है। कुदरती जिस्मानी परिवर्तन के साथ मन की दशा बुरी तरह से प्रदूषित हुई है। हाल के दशकों में विद्यार्थियों के स्कूल बस्तों का वजन बढ़ा है। कक्षाओं के पाठ्यक्रम जटिल हुए हैं और इसने विद्यार्थियों का मानसिक सुकून छीना है। नतीजतन, बच्चों को इन समस्याओं से मुक्त करने के लिए टेक्स्ट बुक्स की संख्या कम करने और पाठ्यक्रम को घटाने की दलीलों से शिक्षा बाजार गर्म है। यहां आत्म-मीमांसा का एक बड़ा प्रश्न यह है कि क्या महज स्कूल बस्ते का भार कम कर देने या फिर पाठ्यक्रम का स्तर निम्न कर देने से विद्यार्थियों को परीक्षा के तनाव से महफूज रखा जा सकता है?

विद्यार्थी जीवन में स्वाध्याय एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इससे एक विद्यार्थी कठिन मेहनत के बल पर खुद में अंतर्निहित कमियों की भरपाई करता है और एकलव्य की तरह अपनी विधा में महारत हासिल कर लेता है। लेकिन पिछले दो-तीन दशकों में विद्यार्थी के जीवन के स्व-निर्माण के इस तरीके में काफी क्षरण आया है। विद्यार्थियों के द्वारा घंटों वाट्सएप पर अपने दोस्तों के साथ बात करने और यूट्यूब पर वीडियो देखने में जिस बहुमूल्य समय की बर्बादी की जाती है, आज उस पर गहनता से चिंतन की दरकार है।

माना जाता है कि अगर आप किसी कार्य के लिए योजना बनाने में विफल रहते हैं तो आप असफल होने की योजना बना रहे होते हैं। कार्य की विशालता को ध्यान में रखते हुए योजनाबद्ध तरीके से कामयाबी पाने की व्यूहरचना के अभाव में मन में चिंता, फिर निराशा और आखिर तनाव उत्पन्न होता है। परीक्षा के बारे में जब विद्यार्थियों की नींद खुलती है, तब तक पीछे जाकर चीजों को फिर से सहजने के लिए काफी देर हो चुकी होती है। इसके अलावा, अभिभावकों द्वारा अपने बच्चों से जमीनी सच्चाई से परे उम्मीद रखने से भी मन एकाएक व्याकुल हो उठता है जिसकी परिणति हताशा और अवसाद में होती है।

लिहाजा, परीक्षा तनाव को अपने जीवन से दूर रखने के लिए विद्यार्थियों की जीवन शैली में अहम परिवर्तन की दरकार है। जीवन में इसके लिए एक लक्ष्य निर्धारित करके उसका शिद्दत से पीछा करने की जरूरत है। 'करत-करत अभ्यास ते जड़मति होत सुजान' के आधार पर निरंतर अध्ययन करने और नया सीखने की आदत का विकास करना होगा। मोबाइल फोन और टेलीविजन के विवेकपूर्ण उपयोग के लिए मन पर कठोर नियंत्रण अति आवश्यक है। तेजी से गुजरते समय और विद्यार्थी-जीवन की अहमियत को पहचानते हुए और मन को वश में करते हुए अगर स्वाध्याय के माध्यम से अपने और अभिभावकों के सपनों को साकार करने की पूरी सच्चाई और लगन से कोशिश की जाए तो परीक्षा एक तनाव नहीं, बल्कि संपूर्ण जीवन यात्रा का एक प्रतीक्षित और सुखद पड़ाव बन जाता है।

जांच पर आंच

पश्चिम बंगाल में जो कुछ हुआ, वह अभूतपूर्व है। इसे सियासी ड्रामे के नजरिये से न देखें, बल्कि इस पर दुख जताइए क्योंकि यह एक ऐसे विवाद की बुनियाद है, जो आगे चल कर देश के संघीय ढांचे के लिए बहुत बड़ा खतरा बनने जा रहा है। इसमें शक नहीं कि सीबीआइ हमेशा से केंद्र की सत्ता की कठपुतली रही है, यही इसकी छवि है और यही इसकी सच्चाई भी है। यह बात हर वह राजनीतिक पार्टी कहती रही है जो विपक्ष में होती है और हर वह पार्टी जो सत्ता में होती है, यही कहती है कि सीबीआइ एक स्वायत्त संस्था है। बावजूद इसके ऐसा कभी नहीं देखा गया कि राज्य पुलिस सीबीआइ के अफसरों को हिरासत में ले ले और मुख्यमंत्री उस अधिकारी के साथ रात में ही पूरे दल-बल के साथ धरने पर बैठ जाएं जिससे सीबीआइ को पूछताछ करनी थी! ममता बनर्जी ने जिस तरह सीबीआइ की कार्रवाई को लेकर केंद्र सरकार के खिलाफ मोर्चा खोल दिया, इसे राज्य बनाम केंद्र की जंग करार दे डाला, उससे हर कोई हैरान है। उन्होंने इसे केंद्र सरकार की गुंडागदी और राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार के इशारे पर की गई छापेमारी बताया, लेकिन यह नहीं बताया कि एक पुलिस कमिश्नर से सीबीआइ अगर पूछताछ करना चाहती है तो इससे मुख्यमंत्री को क्या तकलीफ है?

सीबीआइ की एंट्री रोकने पर याद आया कि मौजूदा प्रधानमंत्री जब गुजरात के मुख्यमंत्री थे, सीबीआइ उन्हें पूछताछ के लिए बुलाती थी तो वे पेश होते थे, सवालों के जवाब देते थे, लेकिन हमने कभी नहीं सुना कि उन्होंने सीबीआइ को रोकने जैसे किसी कदम पर चर्चा तक भी की थी। अगर राजीव कुमार की जगह ममता बनर्जी से सीबीआइ ने पूछताछ की कोशिश की होती तब तो न जाने क्या हो जाता! ताजा मामले में ममता अगर सवाल उठातीं कि सारदा घोटाले में मुकुल रॉय के खिलाफ सीबीआइ क्यों नहीं कार्रवाई कर रही है, उन्हें तृणमूल से भाजपा में जाने का फायदा क्यों मिल रहा है, तो उनका विरोध तार्किक लगता, लेकिन जिस गलत तरीके से वे 2019 का सियासी रास्ता तलाश रही हैं, वह अतार्किक है।

ममता एक जुझारू और लड़ाकू नेता हैं। बंगाल में वाम के खूनी राज का खात्मा करने का सेहरा उनके सिर पर है, लेकिन अब खुद उन पर खूनी राजनीति के आरोप लग रहे हैं। अब तक भाजपा कार्यकर्ताओं के खून का आरोप लग रहा था, लेकिन अब लोकतंत्र और संघीय ढांचे के खून के छींटे भी पड़ते साफ दिख रहे हैं। सियासी लड़ाई अपनी जगह है, सियासी जंग में कौन भारी यह फैसला तो बंगाल की जनता करेगी, लेकिन ममता बनर्जी जिस अफसर की रक्षक बन कर धरने पर बैठ गईं, उससे पूछताछ होकर रहेगी यह फैसला तो सुप्रीम कोर्ट ने सुना ही दिया है।

● *मो. ताबिश, जामिया मिल्लिया, नई दिल्ली*

दुर्घटना की सड़क

सड़क परिवहन एवं राजमार्ग मंत्रालय की ओर से चार से दस फरवरी तक सड़क सुरक्षा सप्ताह मनाया जा रहा है। लोगों को यातायात नियमों के प्रति जागरूक करने और सड़क सुरक्षा उपायों की जानकारी देने के लिए यह कार्यक्रम हर वर्ष आयोजित किया जाता है। भारत में सड़क हादसों में मरने वालों की बढ़ती संख्या काफी चिंताजनक है। यातायात नियमों का पालन तो हर हाल में होना चाहिए, साथ ही बदतर सड़कों को ठीक करने की दिशा में भी सरकार को ठोस पहल करनी चाहिए। खराब सड़कें भी दुर्घटनाओं का कारण बनती हैं। सड़क सुरक्षा सप्ताह मनाने की सार्थकता तभी है जब देश की सभी सड़कें गड्ढा मुक्त और सुरक्षा सुविधाओं से लैस हों। यातायात नियमों की अनदेखी पर जुर्माने के साथ ही खराब सड़कों के लिए निर्माण कंपनियों पर सख्ती से एक्शन लिया जाए, वरना हर साल सड़क सुरक्षा सप्ताह मनाया जाएगा और दुर्घटनाओं का सिलसिला भी यों ही चलता रहेगा।

● *जफर अहमद, रामपुर डेहरू, मधेपुरा, बिहार*

किसी भी मुद्दे या लेख पर अपनी राय हमें भेजें। हमारा पता है : ए-8, सेक्टर-7, नोएडा 201301, जिला : गौतमबुद्धनगर, उत्तर प्रदेश

आप चाहें तो अपनी बात ईमेल के जरिए भी हम तक पहुंचा सकते हैं। आइडी है : chaupal.jansatta@expressindia.com

आबादी से संकट

बढ़ती जनसंख्या के कारण आज देश में संसाधनों की दिन प्रतिदिन कमी होती जा रही है। लगभग हर भारतीय इस सच से रूबरू है। 1991 की जनगणना में भारत की जनसंख्या लगभग 85 करोड़ थी जो सन 2011 तक बढ़कर 121 करोड़ के आसपास पहुंच गई। भारत का क्षेत्रफल के लिहाज से विश्व में सातवां स्थान है जबकि जनसंख्या के मामले में दूसरा है। भारत में विश्व के लगभग 2.42 फीसद क्षेत्रफल पर विश्व की जनसंख्या का लगभग 17.5 फीसद भाग निवास करता है जो वैश्विक अनुपात से कहीं ज्यादा है। दरअसल, बढ़ती जनसंख्या देश के विकास में किसी न किसी रूप में बाधा ही पहुंचा रही है। आज इसके कारण करोड़ों युवा बेरोजगार घूम रहे हैं। लोग प्रतिदिन संसाधनों की कमी के कारण गरीबी के दलदल में धंसते जा रहे हैं। जमीन की बढ़ती मांग के कारण जंगलों को उजाड़ा जा रहा है, जिससे पर्यावरण प्रदूषित हो रहा है। कृषि योग्य भूमि सिकुड़ती जा रही है जिससे खाद्य संकट पनप रहा है। आज लाखों लोग घरों की कमी के कारण फुटपाथों पर रहने को मजबूर हैं। गरीब बच्चे शिक्षा ग्रहण करना तो दूर, चाय के खोखों आदि पर काम करके पेट भरने को मजबूर हैं।

इस संकट से निपटने के लिए सरकार द्वारा सर्वशिक्षा अभियान चलाया जा रहा है क्योंकि 'पढ़ेगा इंडिया तभी तो बढ़ेगा इंडिया'। लोगों को इस अभियान से पूर्ण लाभ लेना चाहिए। देश का हर युवा शिक्षित होगा तो वह अपने हित और अहित में अंतर स्पष्ट कर सकेगा। इससे एक स्वच्छ और समृद्ध भारत का निर्माण होगा।

● *शशांक वार्ष्णेय, नई दिल्ली*

इनकी शिक्षा

हमारे देश में सतत विकास लक्ष्य के तहत घोषणा की गई थी कि सभी बच्चों को बुनियादी शिक्षा उपलब्ध करा देंगे लेकिन आंकड़े बताते हैं कि अब भी करोड़ों बच्चे स्कूलों से बाहर हैं। इनमें दिव्यांग बच्चों की संख्या काफी ज्यादा है। उन्हें किसी न किसी बहाने शिक्षा से वंचित किया जाता है। उनके साथ सामान्य बच्चों जैसा व्यवहार नहीं किया जाता और बार-बार यह अहसास कराया जाता है कि वे दिव्यांग हैं, वे कुछ नहीं कर सकते हैं! ऐसा बर्ताव कई बार बच्चों में अवसाद और कुंठा को जन्म दे सकता है। इसलिए दिव्यांग बच्चों को किसी खास वर्ग में बांट कर विशेष स्कूलों के हवाले कर देने से बेहतर है उन्हें विशेष शिक्षकों के जरिए स्कूली शिक्षा दी जाए। दिव्यांग बच्चे भी इसी समाज का अभिन्न अंग हैं। उन्हें नजरअंदाज या बहिष्कृत कर हम विकसित समाज और देश की परिकल्पना भला कैसे कर सकते हैं! दिव्यांग बच्चों को स्कूली शिक्षा की मुख्यधारा से बाहर कर समावेशी समाज और शिक्षा की परिकल्पना भी मुश्किल है।

● *अश्मिता, अंबेडकर कॉलेज, नई दिल्ली*